जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए, अद्धासमए य। अनुयोगद्वार सूत्र, २१८

४. द्रष्टव्य, व्याख्याप्रज्ञप्ति, शतक २, उद्देश्यक १०, सूत्र ७-८

५. णवरं पएसा अणंता भवियव्वा। -वही

६. वही, सूत्र २-६

७. अनुयोगद्वार सूत्र २१८

८. व्याख्याप्रज्ञप्ति, शतक, ८, उद्देशक १०, सूत्र २३-२४

९. स्थानांग सूत्र, स्थान ४, उद्देशक ३

१०. व्याख्याप्रज्ञप्ति, शतक २५, उद्देशक २

११. प्रज्ञापना सूत्र, पद ५, सूत्र ५००-५०३

१२. वही, सूत्र ५०४

१३. वही, सूत्र ४३८-४३९

१४. गइलक्खणो उ धम्मो, अहम्मो ठाणलक्खणो।
भायणं सव्वदव्वाणं, नहं ओगाहलक्खणं।
वत्तणा लक्खणो कालो, जीवो उवओगलक्खणो।
नाणेण दंसणेण च सुहेण दुहेण य।।
सद्दंधयार उज्जोओ, पभा छायातवे इ वा।
वण्णरसगंधफासा, पुग्गलाणं तु लक्खणं।।-उत्तराध्ययन सूत्र २८.९-१२

१५. प्रज्ञापना सूत्र, पद ३ सूत्र २७०

१६. व्याख्याप्रज्ञप्ति शतक १३, उद्देशक ४, सूत्र २४-२८

१७. व्याख्याप्रज्ञप्ति शतक २०, उद्देशक २, सूत्र ४-८

१८. अत्र द्रव्याभेदवर्ति-नवर्तनादिविवक्षया।
कालोऽपि वर्तनाद्यात्मा जीवाजीवतयोदितः।
पर्यायाणां हि द्रव्यत्वेऽनवस्थापि प्रसज्यते।
पर्यायरूपस्तत्कालः पृथग् द्रव्यं न संभवेत।। -
लोकप्रकाश, सर्ग २८, श्लोक १३ व १५

१९. लोकप्रकाश २८.४७

२०. वही २८.४८

२१. वही २८.४९

२२. वही २८.५३

२३. लोकप्रकाश २८.५५ के पश्चात्

२४. व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र

■

कंचन कांकरिया

धर्म का सही स्वरूप

उत्तराध्ययन सूत्र के आठवें 'कापिलीय' अध्ययन में एक जिज्ञासु ने पूछा कि –

अधुवे आसासयम्मि, संसारम्मि दुक्खपउराए।
किं णाम होज्ज तं कम्मयं, जेणाहं दुग्गइं ण गच्छेज्जा।।

अर्थात् इस अस्थिर, अशाश्वत और प्रचुर दुःखमय संसार में ऐसा कौन-सा कर्म है जिसके फलस्वरूप मैं दुर्गति में न जाऊँ? इस अध्ययन की १८ गाथाओं में बड़े ही सुन्दर ढ़ंग से धर्म का स्वरूप समझाते हुए विशुद्ध प्रज्ञा वाले कपिल केवली ने कहा कि जो केवली प्ररूपित दया धर्म का पालन करते हैं, वे संसार सागर से तिर जाते हैं। इस धर्म का पालन करने वालों ने ही इस लोक-परलोक को सफल किया है और करेंगे।

कई जिज्ञासु प्रश्न करते हैं कि इस लोक और परलोक को सुखी बनाने के लिए पौषध प्रतिक्रमणादि कष्टकारी क्रियाएँ क्यों करें? भावों को शुद्ध कर लेंगे हमारी मुक्ति हो जायेगी। बंधुओं हर साधक माता मरुदेवी या भरत चक्रवर्ती जैसा नहीं बन सकता इसीलिए महामुनिश्वर भगवान महावीर ने सामायिक पौषध प्रतिक्रमणादि करने का उपदेश दिया है। प्रभु महावीर के बताये हुए सारे नियम राग द्वेष की प्रवृत्तियों को वश में करने के लिए ही हैं। जैन धर्म में साधना की जो पद्धतियाँ बतलाई गई हैं वे इतनी सुन्दर और बेजोड़ हैं कि उनके द्वारा हम शीघ्र ही अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। इन पवित्र क्रियाओं में जब तक मन जुड़ा रहेगा तब तक अपवित्र विचार मन में नहीं आएँगे, सावद्य भाषा नहीं बोली जायेगी तथा काया से भी छह काया के जीवों की रक्षा होगी। इसीलिए ज्ञानी महात्मा कहते हैं कि धार्मिक क्रियाओं को छा जाने दो जीवन के हर एक क्षण पर, एकमेक हो जाने दो शरीर की एक-एक क्रियाओं पर तो कषायों पर शालीन हो जायेगी।

धार्मिक क्रियाओं का महत्व समझ में आ जाये तो इसमें बहुत मन लगता है और एक अद्भुत अलौकिक आनंद की प्राप्ति होती है कि इन क्रियाओं के माध्यम से अनंतानंत जीवों को अभयदान प्रदान किया है जिसके फलस्वरूप कर्मों के पुंज के पुंज नष्ट हो रहे हैं। धार्मिक क्रियाओं का फल तत्काल दिखाई नहीं दे तो भी विश्वास क्रियाओं का फल तत्काल दिखाई नहीं दे तो भी विश्वास रखो उसका फल अवश्य मिलता है क्योंकि ये सर्वांगीण विकास की जड़ है। इनका स्वाध्याय आदि से सिंचन किया जाये तो इसकी शान्ति का दूसरा कोई फल तीन लोक में नहीं है।

तीर्थंकरों को तीर्थंकर बनाने वाली, गणधरों को गणधर बनाने वाली, आचार्यों को आचार्य बनाने वाली यह धर्म करणी ही है। अंतःकरण से धार्मिक क्रियाओं को करने वाला इस लोक में भी आनंद और शांति में रमण करने के कारण सुखी होता है और परलोक में भी सुखी रहता है क्योंकि मोक्ष मार्ग पर चलने वाला रास्ते में भी कहीं विश्राम करता है तो उत्तम स्थान यानी वैमानिक में ही करता है। इसलिए हमें दया, संवर, सामायिक, पौषधादि करके हमें अपनी घड़ियों को सफल करना है। ■

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org